सोनी सलोनी
हिन्दी विभाग
वीमेंस कॉलेज
समस्तीपुर

स्नातक प्रथम खंड
(B.A Part I).
अनिवार्य राष्ट्रभाषा हिन्दी

राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर'

छायावाद की कुहेलिका से निकाल कर हिन्दी कविता को आलोक के देश में, जीवन के तेज से संपन्न एवं सामयिक प्रश्नों से सरोकार रखने वाला बनाने की बात की जाए तो उनमें दिनकर का नाम बहुत ऊंचा है। राष्ट्रीयता की बात की जाए तो हिन्दी कविता में पहली मंजिल भारतेन्दु में मिलती है, ~~इसलिए~~ जिसमें उन्होंने देश-दुर्दशा की ओर अश्रुपूर्ण नयनों से निहारा था, दूसरी मंजिल के पुरोधा मैथिली शरण गुप्त ठहरते हैं जिन्होंने ~~वि~~ वर्तमान की विकलता के साथ अतीत का गौरवपूर्ण आख्यान किया था एवं तीसरी मंजिल में वह दिनकर की अंगुली पकड़कर आगे बढ़ी तथा अन्याय, अत्याचार, राजनीतिक दासता और आर्थिक शोषण के विरुद्ध उसने खुलकर आवाज उठाई।

दिनकर का जन्म बेगूसराय के सिमरिया नामक ग्राम में एक अत्यन्त सामान्य किसान परिवार में हुआ। गाँव की पाठशाला से ही प्रारंभिक शिक्षा आरंभ हुई। अत्यन्त विषम परिस्थितियों में हाई स्कूल की शिक्षा प्राप्त की और हिन्दी में सर्वोत्तम अंकों से उत्तीर्ण हुए एवं पुरस्कृत भी किए गए। फिर 1930 में पटना कॉलेज से इतिहास में सम्मान के साथ बी.ए. की परीक्षा में सफलता प्राप्त की। इतिहास और साहित्य का मणिकांचन साहचर्य उत्तरोत्तर निखरे रूप में हमारे सामने आता है।

दिनकर ने स्वयं स्वीकार किया है कि कविता लिखने की प्रेरणा उन्हें नाटक और रामलीला देखकर उत्पन्न हुई। जब वे नाटकवालों से कोई गीत सुनते तो उसी तर्ज पर अपना गीत गढ़कर गुनगुनाने लगते। जयद्रथ वध, भारत भारती किसान और पथिक जैसी रचनाओं का उनपर गहरा प्रभाव पड़ा और छात्र जीवन में ही उनकी दो रचनाएं 'बारदोली-विजय' और 'प्रणभंग' प्रकाशित हुई परंतु 1935 ई. में प्रकाशित 'रेणुका' ने इन्हें साहित्य जगत में चर्चित कर दिया फिर तो उनकी प्रतिभा दिनोंदिन और प्रखर होती चली गई और छायावादोत्तर युग के बड़े प्रतिनिधि कवियों में आज उनकी गणना होती है।

दिनकर की प्रमुख कृतियाँ निम्नलिखित हैं —

काव्य — रेणुका, हुंकार, रसवंती, द्वन्द्वगीत, कुरुक्षेत्र, सामधेनी, बापू, धूप और धुआँ, रश्मिरथी, नीलकुसुम, नए सुभाषित, सीपी और शंख (अनुवाद), उर्वशी, परशुराम की प्रतीक्षा, कोयला और कवित्व, आत्मा की आँखें (अनुवाद), मृत्तितिलक, हारे को हरिनाम आदि.

आलोचना और निबंध — मिट्टी की ओर, अर्द्धनारीश्वर, वेणुवन, रेती के फूल, काव्य की भूमिका, पंत प्रसाद और मैथिलीशरण, वट-पीपल, शुद्ध कविता की खोज, राष्ट्रभाषा आंदोलन और गाँधीजी, साहित्यमुखी, शेष निःशेष।

सांस्कृतिक इतिहास — संस्कृति के चार अध्याय, हमारी सांस्कृतिक एकता, भारतीय एकता

यात्रा वृतान्त और संस्मरण — 'देश-विदेश' लोकदेव नेहरू, दिनकर की डायरी।

लघुकथा — उजली आग

उनके इस अवदान के लिए भारत सरकार ने उन्हें 'पद्मभूषण' से अलंकृत किया उनकी पुस्तक 'संस्कृति के चार अध्याय' साहित्य अकादमी से पुरस्कृत हो चुकी है।

दिनकर के समान प्रखर इस सूर्य था, जो में अवतरित हुआ था, 24 अप्रैल 1974 को आकस्मिक निधन हो गया।

दिनकर राष्ट्रीय भावनाओं के गायक थे। विशेष रूप से पराधीनता के दिनों में जो दमन और अत्याचार हुए दिनकर उसके भोक्ता थे और अपनी वाणी के द्वारा उन्होंने उसके प्रतिकार का प्रयत्न किया। आवेग उनके काव्य का प्रमुख आकर्षण है, संवेदनशीलता इस कवि का प्रमुख अलंकरण। शायद ही ऐसा कोई आघात हो जिसकी प्रतिक्रिया में दिनकर ने लेखनी न चलाई हो। पराधीनता के दिनों में उसने 'हिमालय' के बहाने देश के नवयुवकों को गुलामी की जंजीर तोड़ फेंकने के लिए ललकारा था।

"ले अंगड़ाई उठ, हिले धरा, कर निज विराट स्वर में निनाद
तू शैलराट, हुंकार भरे, फट जाय कुहा, भागे प्रमाद।
तू मौन त्याग, कर सिंहनाद, रे तपी! आज तप का न काल,
नवयुग शंखध्वनि जगा रही, तू जाग-जाग मेरे विशाल।

प्रिंस ऑफ वेल्स के स्वागत में नई दिल्ली की साज सज्जा देखकर उसकी तीव्र भर्त्सना इन शब्दों में व्यक्त होती है — 'वैभव की दीवानी दिल्ली
कृषक मेघ की रानी दिल्ली

→

अनाचार अपमान व्यंग्य की
चुभती हुई कहानी दिल्ली
दो ही दिन के बॉल डांस में, नाच हुई बेपानी दिल्ली।
कैसी यह निर्लज्ज नग्नता, यह कैसी नादानी दिल्ली।

और यह आक्रामकता कभी निस्तेज नहीं हुई। चीनी आक्रमण की ~~निर्लज्जता~~ बर्बरता से मर्माहत हो उन्होंने फिर से गर्जना की

'पर्वतपति को आमूल डोलना होगा
शंकर को ध्वंसक नयन खोलना होगा
असि पर अशोक को मुंड तोलना होगा
गौतम को जय जयकार बोलना होगा।
यह नहीं शांति की गुफा, युद्ध है, रण है
तप नहीं, आज केवल तलवार शरण है
ललकार रहा भारत को स्वयं मरण है
हम जीतेंगे यह समर, हमारा प्रण है।

दिनकर इतिहास के विद्यार्थी थे और उनकी ऐतिहासिक चेतना अत्यन्त प्रखर थी। इन्होंने इतिहास से जैसी जीवंत प्रेरणा प्राप्त की और इतिहास जिसप्रकार उनकी कविता में स्वयं की व्यथा गाथा कहता है वैसा समकालीन किसी अन्य कवि में नहीं दीख पड़ता। 'पाटलिपुत्र की गंगा से' कविता में कवि ने गंगा को मार्मिक उपालंभ देते हुए कहा है -

"चमचम उठा तेरे मरघट में जिस दिन सोने का संसार
एक एक कर लगा दहकने मगध सुंदरी का शृंगार
जिस दिन जली चिता गौरव की, जयभेरी जब मूक हुई,
जमकर पत्थर हुई न क्यों, यदि टूट नहीं दो टूक हुई।

दिनकर की कल्पना यदि इतिहास के खंडहरों में भटकती है तो वह वर्तमान को अपने

कंधे पर बिठाए चलती है। दिनकर ने एकबार स्वयं कहा भी है 'पुरातन के प्रति मोह का यह अर्थ नहीं लगाना चाहिए कि मैं सदेह नालंदा को ही वापस बुलाना चाहता हूँ, बल्कि यह कि जिस जिज्ञासा की कल्पना ने नालंदा को संभव किया था, मैं उस जिज्ञासा का जागरण चाहता हूँ।"

दिनकर क्रांति के आसक्त थे। क्रांति में हिंसा का स्थान होता ही है इसलिए दिनकर हिंसा को भी एक सीमा तक आवश्यक मानते हैं। तप, करुणा, क्षमा, विनय आदि मानव के गुण हैं लेकिन जब समूह की बात आती है तो पाशविकता का सामना दुनी पाशविकता से करना पड़ता है।

पर हिंसा साधन है, साध्य है वर्गहीन समाज की रचना जहाँ प्रत्येक मनुष्य का एकसमान 'सम' हो और धरती 'युद्ध की दुरभीति' से मुक्त हो। हिंसा का दायित्व तलवार उठाने वाले पर नहीं बल्कि उस पर है जो दूसरे के अधिकारों का हरण कर उसका जीवन दूभर बना देते हैं। यह हर जगह सही है चाहे वह देश की बात हो या विश्व की।

वास्तविक जीवन में दिनकर की सहानुभूति दीनों-उपेक्षितों के प्रति थी। जब वे एक ओर धनपतियों के श्वानों के राजसी ठाठ को देखते हैं और दूसरी ओर कृषकों के बालकों को माता के सूखे स्तन चूसते देखते हैं तो वे धैर्य खो देते हैं।

"हटो व्योम के मेघ पंथ से, स्वर्ग लूटने हम आते हैं
दूध, दूध ... ओ वत्स! तुम्हारा दूध खोजने हम जाते हैं।

ऐसा आहत मन और ऐसी गहन संवेदना के धनी हैं दिनकर। यह ठीक है कि दिनकर 'काल के चारण

है, समाज उन्हें अपने से बाँधे रखता है पर कवि का दूसरा सुकुमार पक्ष भी है जो समय-समय पर अपनी पूरी कोमलता से उद्‌गारित होता है। 'कोयला और कवित्व' में उन्होंने कहा भी है-

'सूख गई है दूब, झुलस कर मुरझा गया कमल है।
अप्सरियों मत छूओ, झील का सलिल नहीं शीतल है।
तुमसे मुझे विपुल काल का कोप किए जाता है;
कला नहीं, कर्तव्य आँख से दूर लिए जाता है।'

'हुंकार', 'कुरुक्षेत्र' और 'परशुराम की प्रतीक्षा' के रचनाकार ने ही 'रसवंती', 'द्वन्द्वगीत', 'नील कुसुम' और 'उर्वशी' की अत्यन्त कोमल, सुकुमार और रससिक्त रचना भी की है। गाँव में अपनी किशोरावस्था में उन्होंने वहाँ की हरी-भरी प्रकृति, लहराते हुए धानखेत, गदराई गंगा, सरल पुरुषों और अल्हड़ किशोरियों को ~~देखा~~ देखा था। इसकी अमिट छाप कवि पर दीखती है। 'बालिका से वधू' शीर्षक कविता की पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं-

माथे में सिंदूर पर, छोटी दो बिंदी चमचम सी ...

... चली पिया के गाँव उमर के सोलह फूलों ~~वाली~~ ।"

यही वह बिंदु है जिसने आगे चलकर 'उर्वशी' के अप्रतिम सौंदर्य चित्रों, अरूप संवेदनों एवं सुकुमार कल्पना को कवि ने चरम विस्तार दिया। दिनकर मूलतः मुक्तक काव्य के कवि थे। उनकी अधिकांश प्रसिद्ध कविता मुक्तक ही है। उसमें इतना आवेग है कि वे प्रबंध के अनुशासन

में बंधकर बहुत दूर तक नहीं चल सकते थे। फिर भी उन्होंने तीन प्रबंध काव्य की रचना की है। 'कुरुक्षेत्र' 'रश्मिरथी' एवं 'उर्वशी' उनकी तीन प्रमुख प्रबंध काव्य हैं। जीवन के गंभीर और जटिल प्रश्नों को पूरे सांस्कृतिक सौंदर्य के साथ दिखाने के लिए संभवतः इसकी आवश्यकता कवि को महसूस हुई।

'कुरुक्षेत्र' में कवि ने युद्ध की समस्या पर इतिहास के आलोक में विचार किया है परंतु उसका सारा ज़ोर युद्ध के कारणों के विश्लेषण पर है। कुरुक्षेत्र का प्रबंध शिथिल है।

'उर्वशी' का प्रबंध शिल्प 'कुरुक्षेत्र' की अपेक्षा पुष्ट है। इसमें दिनकर ने काम और आध्यात्म में संतुलन स्थापित करने की चेष्टा की है। उर्वशी में चित्रण को अत्यन्त सजीव, चित्रात्मक और प्रभविष्णु भाषा में अभिव्यक्त किया गया है।

'रश्मिरथी' इन दोनों प्रबंधकाव्यों के बीच की रचना है। कहा जा सकता है कि इसमें कवि ने 'गुप्त जी' को अपना आदर्श माना है और महाभारत के एक उपेक्षित पात्र 'कर्ण' को सहानुभूति देकर कुलीनता के गर्व का खंडन और व्यक्तिगत वीरता, दानशीलता, सत्यप्रियता आदि गुणों की समाज में प्रतिष्ठा करनी चाही है।

दिनकर के कृतित्व का एक सबसे प्रमुख पक्ष उनकी काव्यभाषा है। छायावाद के बाद जिन कवियों ने हिन्दी कविता को सहज, गतिशील और जीवन की गर्म साँसों से उष्ण भाषा का दान दिया उसमें दिनकर अग्रगण्य हैं। दिनकर की भाषा में

एक ओर संस्कृत के शब्द भण्डार की गरिमा है तो दूसरी ओर उर्दू की सहज रवानी और चुस्ती भी है। उनकी भाषा में लाक्षणिकता का विकास मिलता है। उनकी बिंबविधायिनी शक्ति भी स्तुत्य है। वे जीवन की हर कोमल-कठोर अनुभूति को चित्रित करने की कला में पारंगत हैं।

डॉ. नगेन्द्र कहते हैं- "छायावादी कवियों की अपेक्षा दिनकर का बिंबविधान अधिक प्रत्यक्ष, मूर्त और अनुभवगम्य है। उसमें चित्रकला के साथ मूर्तिकला के गुण विद्यमान हैं- वह वायवी कम लौकिक अधिक है।"

दिनकर ने अपनी भाषा में सुबोधता का ध्यान बराबर रखा है। कवि ने अपने बारे में कहा भी है कि भाषा की सुबोधता उन्हें अनुभूति के अधकचरेपन से कम प्यारी नहीं है। वे सौंदर्य से अधिक सुस्पष्टता के प्रेमी हैं। दिनकर की शैली एक सार्वजनिक मंच के प्रवक्ता की शैली है।

दिनकर देश-विदेश की काव्यक्रांति से परिचित एक जागरुक कवि थे। इसी युगधर्मिता ने उन्हें नए नए साहित्य के आंदोलनों से जोड़ा और शुद्ध कविता की खोज में वे राष्ट्रीयता से अंतर्राष्ट्रीयता की ओर अग्रसर होते गए।